द्वितीय अध्याय

हिंदी उपन्यास परंपरा
एवं
प्रेमचंद और उनके उपन्यास

2.1. भूमिका :

हिंदी उपन्यास यात्रा के अमीत हस्ताक्षर हैं मुंशी प्रेमचंद जी। उन्होंने उपन्यास संबंधी तीन निबंध लिखे-उपन्यास, उपन्यास का विषय और उपन्यास रचना। उन्होंने उपन्यास शीर्षक निबंध में लिखा ''मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र समझता हूँ। मानव चरित्रों पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।' यथार्थवाद को समग्रत: उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उन्होंने लिखा कि जब वह दुर्बलताओं का चित्रण करने में शिष्टता को सीमाओं से आगे बढ़ जाता है, तो आपत्तिजनक हो जाता हैं।' इसलिये जैसा कि उन्होंने आगे कहा 'वही उपन्यास उच्च कोटि के समझे जाते हैं, जहाँ यथार्थ और आदर्श का समावेश हो गया हो। उसे आप 'आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद' कह सकते हैं। पर 'गोदान' खाँटी यथार्थवादी उपन्यास है।

2.2. हिंदी उपन्यास परंपरा और प्रेमचंद :

2.2.1. हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास

आधुनिक युग में उपन्यास, कथा साहित्य का एक विशिष्ट रुप है। जीवन की परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के विधाओं के रुप में भी परिवर्तन होता गया और कथा का एक विशिष्ट रुप उपन्यास बन गया और यही कारण है कि आरंभिक दिनों में जो कथा-साहित्य घृणा [1] की वस्तु थी वही आज उपन्यास का रुप धारण कर साहित्य की एक लोकप्रिय एवं सम्मानित विधा है, जिसे आधुनिक युग का महाकाव्य कहा जाता है।'

हिन्दी-उपन्यास साहित्य के विकास को सुविधा के लिए तीन कालों में विभाजित किया जा सकता हैं :-

(1) पूर्व प्रेमचंद-युग (उद्भव काल)

(2) प्रेमचंद-युग (विकास काल)

(3) प्रेमचंदोत्तर-युग (नव-विकास काल)

(1) **पूर्व प्रेमचंद युग (हिंदी का प्रथम उपन्यास) :**

हिंदी में सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवास का ''परीक्षा गुरु'' है जिसका प्रकाशन सन् 1882 ई० हुआ था किन्तु पूर्व पं० श्रद्धाराम फिल्लौरी का 'भाग्यवती' नामक

उपन्यास सं० 1834 में ही लिखा जा चुका था, लेकिन इसका प्रकाशन सं. 1844 में हुआ। अतएव, प्रकाशन की दृष्टि से 'परीक्षां गुरु' ही प्रथम उपन्यास है। लाल जी के बाद ठाकुर जगमोहन सिंह ने सन 1886 ई. में 'श्यामास्वप्न' नामक उपन्यास लिखा। पं० अम्बिकादत्त व्यास ने आश्यर्य वृतान्त नामक मनोरंजक उपन्यास लिखा। पं० बालकृष्ण भट्ट ने सन् 1886 में 'नूतन ब्रह्मचारी' और सन् 1892 ई० में 'सौ अजान एक सुजान' नामक सामाजिक उपन्यास लिखा।

इसके साथ ही अनुदित उपन्यास परम्परा एवं मौलिक उपन्यास परंपरा में उपन्यासों के अनूदित एवं मौलिक रुप दिखाई पड़ते हैं।

पूर्व-प्रेमचंद-युग में दूसरी भाषाओं से अनूदित उपन्यास एवं भौतिक उपन्यासों की रचना हुई, किन्तु ये औपन्यासिक कला की दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रखते कारण कि इन उपन्यासों की सृष्टि महत्व उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं हुई, किंतु इस युग के उपन्यास-साहित्य का विशिष्ट महत्व इसलिए है कि तद्युगीन लेखकों ने उपन्यास के प्रति लोगों में तीव्र रुचि और आकर्षित उत्पन्न किया। इस समय के उपन्यासकारो ने तिलस्मी, ऐयारी, जासूसी, सामाजिक, ऐतिहासिक, भाव प्रधान उपन्यासों की रचना कर उपन्याससाहित्य को प्रबल आधार प्रदान की।

प्रेमचन्द के पूर्ववर्ती उपन्यासों के सम्बन्ध में डॉ. एस. एन. गणेशन का मत है-

''उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचन्द के पदार्पण करने तक हमारा उपन्यास साहित्य चिन्तन रहित, काल्पनिक, अवास्तविक, रहस्यमय तथा विवेकहीन रहा।'' [2]

किन्तु यह उपन्यास साहित्य का उद्भव काल था। आगे इसी उपन्यास परम्परा का विकास हुआ।

(2) प्रेमचन्द युग (विकास काल)

उपन्यास क्षितिज पर प्रेमचंद के अवतरित होते ही इस साहित्यांग को एक नया आयाम मिला। प्रेमचंद ने अपने पूर्ववती कथा परम्परा से रस ग्रहण करते हुए नवीन जीवन मूल्यों को स्थापित कर उपन्यास साहित्य को समृद्ध बनाया। भारतेंदु युग के उपन्यास जीवन से दूर थे क्योंकि वे मनोरंजन के उपादान थे किंतु प्रेमचंद युगीन उपन्यास जीवन के निकट आये। इनमें जीवनगत समस्याओं की झाँकी प्रस्तुत की गयी। पूर्ववती उपन्यासकार कल्पना की अतिरंजना

पर बल देते थे, किन्तु प्रेमचंद ने जीवन की यथार्थता पर बल दिया। यही कारण है कि समाज के विविध जीवन मूल्य प्रेमचन्द्र युगीन उपन्यासों में उपलब्ध होते हैं। उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में जो सामाजिक सुधार सम्बन्धी आन्दोलन हुए उसका भी प्रभाव प्रेमचंद पर पड़ा और देश की वर्तमान राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टिकोणों का भी। अंग्रेजी शासन में किसानों का शोषण, जमींदारों का अत्याचार, नारियों की दीन-हीन दशा, धर्म के नाम पर ढोंग, सामाजिक कुरीतियाँ, सरकारी कर्मचारियों का अन्याय और विभिन्न प्रकार के राष्ट्रीय आन्दोलनों को आधार बनाकर प्रेमचंद ने कथा साहित्य का सृजन किया। जहाँ पूर्ववर्ती युग के उपन्यासकार सुधारवादिता, उपदेशात्मकता और मनोरंजकता से आक्रान्त थे वहीं प्रेमचन्द ने यथार्थ का अनुसरण कर कथा साहित्य की सृष्टि की।

आरंभिक दिनों में प्रेमचंद उर्दू में लिखा करते थे। किन्तु बाद में हिंदी में लिखने लगे। जिसमें हिंदी कथा साहित्य को नयी दिशा मिली। प्रेमचन्द का प्रथम उपन्यास 'प्रेमा' सन् 1907 में प्रकाशित हुआ। यह पहले उर्दू में 'हम खुर्मा बहमसबाब' नाम से प्रकाशित हो चुका था। 'प्रेमा' में विधवाओं के प्रति संवेदना प्रकट की गयी है। इसके उपरान्त सन् 1918 ई० में प्रेमचंद का 'सेवासदन' प्रकाशित हुआ जिसमें वेश्या-समस्या को उठाकर उन परिस्थितियों के प्रति आक्रोश व्यक्त किया गया है जो 'वेश्या' बनाती है। इसमें वेश्याओं की दयनीय स्थिति का भी अंकन किया गया है। सन् 1921 ई० में 'वरदान' का प्रकाशन हुआ जिसमें निष्फल प्रेम की कथा वर्णित है। 'प्रेमाश्रम' का प्रकाशन सन् 1922 ई० में हुआ। इसमें किसानों के शोषण के प्रति विद्रोह का स्वर मुखरित हुआ है। सन् 1925 ई० में रंगभूमि का प्रकाशन हुआ। इसमें राजनैतिक समस्याओं को उठाया गया है। पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं का वर्णन करने वाला प्रेमचंद का उपन्यास का 'कायाकल्प' सन् 1926 ई० में निकला। अनमेल विवाह की समस्या पर आधारित उपन्यास 'निर्मला' का प्रकाशन भी सन् 1927 ई० में हुआ। सन् 1927 में प्रकाशित प्रतिज्ञा में 'प्रेमा' के ही कथानक को नये ढंग से उठाया गया है किन्तु कथा के विकास में महत्वपूर्ण अन्तर आ गया है। 'गबन' का प्रकाशन सन् 1931 ई० में हुआ जिसमें मध्यवर्ग की आर्थिक समस्या, नारी की आभूषणप्रियता, स्वाधीनता की समस्या, पुलिस की धाँधली का वर्णन हुआ है। सन् 1932 में 'कर्मभूमि' प्रकाशित हुआ। इसमें अछुत समस्या शोषण की समस्या और राजनैतिक प्रवृतियों की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। 'गोदान' सन् 1936 ई० में प्रकाशित हुआ जिसमें ग्रामीण एवं नगरीय समाज की समस्याओं का चित्रण हुआ है। इसमें एक और ग्रामीणों के संघर्ष की कथा वर्णित है तो दूसरी ओर विलासमय जीवन का

चित्रण हुआ है। 'गोदान' में की कथा मुख्यरूप से अंकित हुई है। इसमें सभी वर्गों का वर्णन मिलता है। 'मंगलसूत्र' सन 1948 में प्रकाशित हुआ जिसमें सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था के प्रति असंतोष प्रकट करते हुए नारी समस्या का अंकन हुआ है।[3]

इसी युग में जयशंकर प्रसाद का समाज में सुधार लाने की इच्छा व्यक्त करने वाला, समाज के यथार्थ रुप को प्रकट करके मनुष्य को अनावृत रूप में देखने वाला 'कंकाल'-नामक उपन्यास सन् 1929 ई० में प्रकाशित हुआ। प्रेमचंद की आदर्शवादी भावभूमि को अपनाकर विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' में सन् 1929 में 'माँ' और 'भिखारिनी' नामक उपन्यास लिखा। प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भारतीयों पर विदेशी विचारधारा के पड़े प्रभाव और भारतीय समाज के उच्चवर्ग को अपने उपन्यासों का विषय बनाया। इनका उपन्यास 'विदा' सन् 1927 ई० में, 'विजय' सन् 1936 ई० में, 'विकास' सन् 1938 ई० में, 'वयालीस' सन् 1947 ई० में, 'विसर्जन' सन् 1949 ई० में तथा 'बेकसी का मजार' सन् 1957 ई० में प्रकाशित हुए। चतुरसेन शास्त्री ने ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना करते हुए सामाजिक यथार्थवादी कथा परम्परा को आगे बढ़ाया। भगवतीचरण वर्मा का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास 'पतन' का प्रकाशन 1928 ई० में हुआ, जिसमें नवाब वाजिद अली शाह के समय के विलासिता का वर्णन हैं। इसके बाद पाप-पुण्य की नुतन व्याख्या करने वाला इनका उपन्यास 'चित्रलेखा' का प्रकाशन 1934 ई० में हुआ।

प्रकृतिवादी उपन्यास के लेखक ऋषभ चरण जैन ने सामाजिक कुरुपता से विषयवस्तु का चयन करके उपन्यासों की सृष्टि की। इसी समय में सियाराम शरण गुप्त ने सन 1933 में गोद, सन् 1934 में 'अन्तिम आकांक्षा' सन् 1937 में 'नारी' नामक उपन्यास लिखे।

हास्य व्यंग्य से युक्त उच्चकोटि के उपन्यासों की सृष्टि निराला ने की। इन्होंने सन् 1931 में 'अप्सरा', सन् 1933 में 'अलंकार', सन् 1936 में 'निरुपमा', प्रभावती चमेली नामक उपन्यास लिखे और 'चोटी की पकड़' का प्रकाशन सन् 1946 ई० में हुआ।

प्रेमचंदयुगीन उपन्यासकारों में वृन्दावन लाल वर्मा का स्थान प्रमुख है। इन्होंने सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों ही प्रकार के उपन्यासों की रचना की। प्रेमचंद युग में अपना अस्तित्व बनाकर एक नुतन मार्ग का अनुसरण करते हुए उपन्याससाहित्य का सृजन किया। इनके उपन्यासों में वैयक्तिक समस्याओं एवं जीवन स्थितियों का सूक्ष्म एवं अन्तर्मुखी चित्र मिलते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद युग में उपन्यास-साहित्य का अत्यधिक विकास हुआ। इस युग के उपन्यास में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं के प्रत्यक्षीकरण, बदलते हुए नैतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति भी हुई। गाँधीवादी आध्यात्मिकता को आधार मानकर मानवतावादी जीवन दृष्टि की स्थापना एवं जीवन का यथार्थ चित्रण इस काल के उपन्यास-साहित्य में प्राप्त होता है। व्यक्ति के आन्तरिक मनोवेगों को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुतीकरण भी इसी युग में आरंभ हुआ।

पूर्व प्रेमचंद युग के उपन्यास घटना प्रधान होते थे। लेखक का ध्यान पात्रों के चरित्र-चित्रण पर कम होता था। इस काल के उपन्यासों में पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ उभरती है और कथा का स्वाभाविक विकास होता चलता है। इस प्रकार इस युग के उपन्यास के रुप-शिल्प में नुतनता मिलती हैं। इसे हिंदी उपन्यास का विकास-युग कहा जा सकता हैं।

(3) प्रेमचन्दोत्तर-युग (नव विकास-काल)

इस युग के उपन्यास साहित्य में अनेकानेक जीवनगत समस्याओं, नये जीवन मूल्यों और जीवन के विविध पत्रों की झाँकी प्रस्तुत की गयी। देशगत एवं जीवनगत सम्पूर्ण परिस्थितियों का अंकन किया गया। विश्वयुद्ध, परमाणु विस्फोट, मुक्ति के लिए राष्ट्रीय आंदोलन, साम्प्रदायिक ढंगे, देश का विभाजन, शरणार्थी समस्या, अकाल, भुखमरी, स्वतंत्रता के बाद की समस्या, नूतन संविधान, राष्ट्रीय योजनायें, महानगरीय समस्या, बेकारी की समस्या, पाश्चात्य प्रभाव के कारण नये फैशन परस्त लोगों की यौन समस्या, नर-नारी के प्रेम, यौनाचार, यौन-तृप्ति आदि के समस्त चित्र आधुनिक युगीन उपन्यासों में चित्रित किये गये। व्यक्ति के अवचेतन मन की ग्रंथियों को मनोविश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया।[4]

इस युग के प्रमुख उपन्यासकारों में इलाचंद जोशी का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है, जिन्होंने मनोविश्लेषणात्मक ढंग के उपन्यास लिखे। अज्ञेय इसी युग के यशस्वी कथाकार हैं। इनका प्रमुख उपन्यास 'शेखर : एक जीवनी' है जिसका प्रथम भाग सन् 1941 में तथा द्वितीय भाग सन् 1944 में प्रकाशित हुआ। यशपाल मार्क्सवाद और फ्रायद के कुँठावाद दोनों से प्रभावित रहे, किन्तु इनके उपन्यासों में समाज के यथार्थवादी चित्रण की प्रकृति भी दृष्टिगत होती है। इनके उपन्यास 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'दिव्या', 'पार्टी कामरेड' झूठा सच आदि प्रमुख हैं।

इसी युग यें आ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भारतीय कथा तथा पाश्चात्य उपन्यास शक्तियों से समन्वित उपन्यास 'वाणभट्ट की आत्मकथा' लिखा जिसका प्रकाशन सन् 1946 में हुआ।

इसके साथ ही रांगेय राघव, नागार्जुन, धर्मवीर भारती, फणीश्वरनाथ रेणु, अमृतलाल नागर, प्रभाकर माचवे, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायण लाल, अमृत राय, मोहन लाल महतो 'वियोगी',

विष्णु प्रभाकर, उषादेती मित्रा, राजेन्द्र अवस्थी, गिरिधर गोपाल, मोहन राकेश, मन्नू भण्डारी, निरुपमा सबती, दुष्यंत कुमार, भीष्म साहनी, जगदम्बा प्रसाद दीक्षित तथा अनेकों उपन्यासकार हैं; जिन्होंने औपन्यासिक परंपरा को बढ़ाने में अपना महत् योगदान दिया।

इस प्रकार प्रेमचन्दोत्तर युग में उपन्यास साहित्य की विविधमुखी प्रगति हुई हैं। इस युग में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सभी परिस्थितियों में परिवर्तन हुए, जिसकी छाप इस युग के उपन्यासों पर पड़ी। अतएव, उपन्यास साहित्य का सर्वांगीण विकास को देखकर इसे 'उपन्यास काल' ही कहा जा सकता है।

2.2.2. हिंदी उपन्यास के विकास में कथा-सम्राट प्रेमचंद का योगदान

कथासम्राट मुंशी प्रेमचंद ने उपन्यास के विकास में अपूर्व योगदान दिया। इन्होंने समाज के विविध पक्षों का सच्चा चित्र खींचा। इनके उपन्यासिक पात्र यथार्थ के धरातल पर स्थित होकर आदर्श की खोज करते हैं।

उपन्यास के संदर्भ में प्रेमचंद की दृष्टि में व्यापकता थी जो निम्न वर्ग से उच्च वर्ग तक की कठिनाइयों का अवलोकन कर लेती थी। उनके उपन्यासों में विधवायें, वेश्याएं, विवाहिताएं, अविवाहिताएं, आधुनिकताएं, युवतियाँ, वृद्धाएं, बूढ़े पति और उनकी युवती पत्नियाँ, किसान, मजदूर, श्रमिक, युग-युग से पीड़ित अछूत, अनाथ, भिक्षुक, अंधे, सरकारी उच्च अधिकारी, वकील, डाक्टर, प्रोफेसर, जज, सेठ-साहूकार, जमींदार, पंडे, पुरोहित, नेता इत्यादि सभी हैं। इतना व्यापक क्षेत्र पूर्ववर्ती उपन्यासकारों की नहीं मिल सका था। प्रेमचंद ने उपन्यास साहित्य को संकुचित जीवन-क्षेत्र से बाहर निकाल कर व्यापक जीवन-क्षेत्र प्रदान किया। वास्तव में प्रेमचंद ने कथा साहित्य को जीवन से जोड़ा और साहित्य का लक्ष्य मनुष्य को माना। प्रेमचंदोत्तर उपन्यासों में जो समस्याएं प्रतिबिम्बित हुई हैं, वे प्रेमचंद युग में ही बीजवत् थीं।

सामाजिक शोषण के विरुद्ध प्रेमचंद ने संघर्ष की जो नींव डाली, प्रेमचन्दोत्तर युग में उसी का विकास हुआ।

पूर्व अनुच्छेदों में प्रेमचंद के औपन्यासिक कृति तथा उनके उद्देश्य पर आलोकपात हुआ हैं। अतः उपन्यास परंपरा को आगे बढ़ाने में प्रेमचंद का महत्वपूर्ण योगदान हैं।

2.3. प्रेमचंद के उपन्यासों का विकास-क्रम

प्रेमचंद हिंदी कथा जगत में कथा-सम्राट के रुप से आख्यायित हैं। हिंदी उपन्यास जगत के वे सम्राट हैं। वे अपनी महती प्रतिभा को साहित्य गगण पर प्रस्फूटित किया है। उनके उपन्यासों के विकास-क्रम को तीन कालों में विभाजित किया जा सकता हैं-

(1) उद्‌भव काल (सन् 1900 से 1917 तक)

(2) विकास काल (सन् 1918 से 1930 तक)

(3) उत्कर्ष काल (सन् 1931 से 1936 तक)

तीनों कालों में मिलनेवाले उपन्यासों की सूची निम्नलिखित हैं :-

(1) उद्‌भव कालीन उपन्यास :

(क) असरारे-मआविद (देव स्थान रहस्य)

(ख) हम खुर्मा-ओ-हमसवाब (प्रेमा)

(ग) किशना

(घ) रूठी रानी

(ङ) जलवा-ए-ईसार (वरदान)

(2) विकास कालीन उपन्यास :

(क) सेवासदन (बाजारे-हुस्न)

(ख) प्रेमाश्रम (गोशा-ए-आफियत)

(ग) रंगभूमि (चौगाने-हस्ती)

(घ) कायाकल्प (पर्दा-ए-मजाज)

(ङ) निर्मला

(च) प्रतिज्ञा (बेवा)

(3) **उत्कर्ष कालीन उपन्यास :**

(क) गबन

(ख) कर्मभूमि (मैदाने-अमल)

(ग) गोदान (गऊदान)

(घ) मंगल-सूत्र (अपूर्ण उपन्यास)

प्रेमचंद के उपन्यासों के प्रकार का विभाजन करें तो रचना प्रक्रिया की दृष्टि से इसके प्रकार दो हैं -

(1) रूपान्तरित उपन्यास (उर्दू के मौलिक उपन्यास)

(2) मौलिक उपन्यास (हिंदी के मौलिक उपन्यास)

2.4. प्रेमचंद के उपन्यासों का मूल विषयवस्तु :

2.4.1. असरारे-मआविद (देवस्थान रहस्य) :

'असरारे-मआविद' की कथावस्तु की अवतारणा धार्मिक हैं जिसमें प्रेमचंद ने अपनी प्रेमी दृष्टि से कर्मकाण्डी पुरोहितों, पंडों का रहस्योद्घाटन करते हुए धर्म के नाम पर हो रहे शोषण एवं भ्रष्टाचार को उजागर किया है। इस उपन्यास पर पं० रतननाथ 'सरशार' के 'फसाना-ए-आजाद' की शैली का विशेष प्रभाव दिखता है।[5]

2.4.2. हमखुर्मा-ओ-हम सवाब (प्रेमा)

प्रेमचंद ने युगीन सुधारवादी आंदोलनों से प्रभावित होकर ही 'हमखुर्मा-ओ-हमसवाब' (प्रेमा) की रचना की। इसकी कथावस्तु मध्यवर्गीय परिवार से ली गयी हैं। समाज में विधवा की दुर्दशा प्रेमचन्द ने देखी थी। इसीलिए विधवा पुनर्विवाह द्वारा इस दुरावस्था का निवारण प्रेमचंद ने इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है।[6]

2.4.3. रुठीरानी

'रुठीरानी' प्रेमचंद का ऐतिहासिक उपन्यास है। औपन्यासिक दृष्टि से यह उपन्यास बहुत अधिक सफल नहीं हैं किन्तु इसमें बहु-विवाह से होने वाली हानियाँ एवं षडयंत्रों से राज्यों में होने वाली कमजोरियों की ओर संकेत किया गया है। इस उपन्यास की विषयवस्तु अतीत काल से ली गयी है किन्तु राष्ट्रीय-एकता, अखण्डता के लिए आपसी एकता की आवश्यकता की ओर दृष्टिपात किया गया है।[7]

2.4.4. जलवा-ए-ईसार (वरदान)

इस उपन्यास की कथावस्तु देशभक्ति से ओत-प्रोत है। इस उपन्यास में एक भारतीय नारी सुवामा का परिचय मिलता है जो देवी की उपासना कर वरदान प्राप्त करती है कि मुझे ऐसा पुत्र हो जो देश सेवा कर सके और देवी के वरदान से उसे एक पुत्र पैदा होता है जिसका नाम पहले प्रताप रखा जाता है, वही आगे चलकर 'बालाजी' के नाम से प्रसिद्ध देश सेवक बनता है। [8]

2.4.5. सेवासदन :

सेवासदन में सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक समस्याओं पर विचार व्यक्त करते हुए सुधारवादी भावों को अभिव्यंजित किया गया है। हिन्दू समाज में दहेज एक घातक प्रथा है। इससे अनेक कुरीतियाँ पनपती हैं। सेवासदन के कृष्णचंद जैसा ईमानदार दरोगा को दहेज के कारण रिश्वत लेना पड़ता है। वे पकड़े जाते है और जेल जाते है। इस नैतिक पतन के लिए दहेज प्रथा ही जिम्मेदार है। दहेज के अभाव में सुमन का विवाह गजाधर जैसे अयोग्य एवं दहे जूवर से हो जाता है। फलत: वैवाहिक जीवन असफल हो जाता है। सुमन वेश्या बन जाती है। इसका कारण दरिद्रता, अनमेल विवाह और दम्पत्ति का विपरीत स्वभाव था। फलत : दोनों में कलह होने लगा और दाम्पत्त जीवन खंडित हो गया।

सुमन को पतन में ढकेलने के लिए वाह्य परिस्थितियाँ भी सहायक होती है। उसके घर के सामने भोली वेश्या रहती थी। आरम्भ में वह वेश्याओं को बुरा समझती थी किन्तु वह देखती है कि बड़े-बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति भी उसके यहाँ आते हैं, मंदिर में नृत्य-होता है तो वह अनुभव करती है कि "भोली जिसकी और कटाक्षपूर्ण नेत्रों से देखती थी वह मुग्ध हो जाता था मानों साक्षात् राधा-कृष्ण के दर्शन हो गये।" [9]

इस प्रकार सुमन के स्वाभिमान को ठेस पहुँचती है।

इस उपन्यास में प्रेमचंद ने वेश्या समस्या को भी उठाया है। एक ओर ये कलंकित समझी जाती हैं तो दूसरी ओर सामाजिक, धार्मिक उत्सवों में इनका नाच-गाना होता है। उच्च वर्ग के व्यक्ति अपने विलास के लिए वेश्या प्रथा को बनाये रखना चाहते हैं- दूसरी ओर मध्यवर्गीय शिक्षित इस प्रथा का समूलोचच्छेदन करना चाहते हैं।

सेवासदन के विट्ठलदास और पदमसिंह ऐसे ही सुधारवादी व्यक्ति हैं जिनके प्रयास से सुमन को वेश्यावृत्ति से मुक्ति मिली।

सेवासदन में कपटी, धूर्त, पाखंडी तथा धर्म के नाम पर ढोंग रचने वालों का पर्दाफाश करते हुए प्रेमचंद ने गजाधर के मुख से कहलाया है– ''आजकल धर्म तो धूर्तों का अड्डा बना हुआ है। इस निर्मल सागर में एक से एक मगरमच्छ पड़े हुए हैं। भोले-भाले भक्तों को निगल जाना इनका काम है। लम्बी-लम्बी जटायें, लम्बे-लम्बे तिलक छापे और लम्बी-लम्बी दाढ़ियाँ देखकर लोग धोखे में आ जाते हैं पर वे सब महापाखंडी, धर्म के उज्ज्वल नाम को कलंकित करने वाले, धर्म के नाम पर टका कमाने वाले, भोग-विलास करने वाले, पापी हैं।''[10]

सुमन की बहन शान्ता की बारात घर से इसलिए लौट आती है कि सुमन 'वेश्या' की बहन है शान्ता भी वहीं विधवाश्रम में चली जाती है, जहाँ सुमन रहती है, किन्तु वहाँ भी उन्हें नहीं रहने दिया गया क्योंकि वेश्या के सम्पर्क से अन्य विधवाओं के सतीत्व के लिए खतरा था। शान्ता का पति सदन अंत में शान्ता को अपना लेता है।

गजाधर सन्यासी हो जाता है। सुमन अकेली हो जाती है और पश्चाताप करती है। उसे अपने पर ग्लानि होती है किन्तु उसी के प्रति जो स्वामी गजानन्द बने हैं, बचा लेता है और विधवाश्रम सम्भालने का काम सौपता है। सुमन 'सेवासदन' में सेवा-कार्य करने लगती हैं।

इस प्रकार प्रेमचंद ने वेश्याओं के प्रति घृणा-भाव व्यक्त न कर उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाया है और उनके उद्धार के लिए 'सेवासदन' की स्थापना कराया है।

2.4.6. प्रेमाश्रम :

इस उपन्यास में ग्रामीण और नागरिक समाज का चित्रण है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न वर्गों के जीवन चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। इस उपन्यास की प्रमुख मूल समस्या भूमि की समस्या है। इससे जमीदार और कृषकों का सीधा सम्बन्ध हैं, किन्तु अधिकारी वर्ग भी किसी न किसी रुप में सम्बन्धित है।[12]

प्रेमाश्रम मूलत किसानों के संघर्ष की कहानी है, सेवक और समर्थ नेताओं के प्रयत्नों की कहानी है, और जमीदारों के किसानों के साथ न्याय करने की कहानी है।

2.4.7. रंगभूमि :

इस उपन्यास का चित्रपट अन्य उपन्यास की अंपेक्षा ग्रह आन्दोलन तथा स्थान-स्थान पर पुलिस और सेना द्वारा निहत्थी जनता पर गोलीवारी की प्रतिच्छाया इस उपन्यास में मिलती हैं।

'रंगभूमि' में प्रेमचंद ने अन्य उपन्यासों की तरह, किसी एक समस्या का समाज के किसी अंग विशेष का, चित्रण नहीं किया, वरन सम्पूर्ण अंगों का चित्र प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की प्रमुख समस्या औद्योगिक सभ्यता वनाम कृषि सभ्यता है। 13

2.4.8. कायाकल्प :

'कायाकल्प' में प्रेमचंद ने धर्मान्धता और साम्प्रदायिकता से उत्पन्न स्थितियों का चित्रण किया हैं।

'कायाकल्प' की कथा के तीन भाग हैं- एक भाग का सम्बंध हिन्दू-मुस्लिम समस्या से है, दूसरे का किसान प्रजा और राजा से है और तीसरा भाग राजा के अन्तः पुर का यथार्थ चित्रण है।

'कायाकल्प' उपन्यास अनेक अलौकिक और अस्वाभाविक घटनाओं से परिपूर्ण है। अतः 'कायाकल्प' वासना को प्रेम और वैभव को सेवा में बदल देने के सत्य सामने रखता है।[14]

2.4.9. निर्मला :

'निर्मला' उपन्यास भी प्रतिज्ञा की भाँति सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने विवाह के प्रश्न को ही एक मात्र प्रमुखता दी है। भारतीय समाज में विवाह के प्रश्न में सबसे भयंकर अभिशाप 'दहेजप्रथा' का है। इसी प्रथा के कारण निर्मला की ट्रेजेडी हुई। 'निर्मला' की समस्या एक दुहाजू के कुमारी कन्या के साथ दूसरे विवाह के भयंकर दष्परिणामों को व्यक्त करती है।

निर्मला के चरित्र को प्रेमचंद ने बड़ी कुशलता से अंकित किया है। निर्मला की दुखान्तता का आभास पहले ही दृश्य में मिल जाता है, जहाँ वह स्वप्नों में डूबकर अपने अन्त की साफ तस्वीर देखती है।

निर्मला के जीवन से शान्ति उसी क्षण विदा हो जाती है जिस क्षण वह वधू बनकर अपने नये घर में प्रवेश करती है। उसकी इस मनोदशा का चित्र प्रेमचंद ने बड़ा मार्मिक खीचा है। यथा, निर्मला जब वस्त्राभूषणों से अलंकृत होकर आइने के सामने खड़ी होती है उस में अपने

सौन्दर्य की सुषमापूर्ण आभा देखी, तो उसका हृदय एक सतृवण कामना से तड़प उठता था। उस वक्त-उसके हृदय में एक ज्वालामुखी सी उठती। मन में आता, इस घर में आग लगा दुँ। अपनी माता पर क्रोध आता, पर सबसे अधिक क्रोध वेचारे निरपराध तोताराम पर आता। वह सदैव इस बात से जला करती।

'निर्मला' में नायिका और नायक दोनों के चरित्रों का बड़ा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रेमचंद ने किया है। इस बेमेल विवाह का दुष्परिणाम यह होता है कि अंत में सारा घर तबाह हो जाता है। स्वयं निर्मला घुल-घुलकर मर जाती है। मरते समय उसके उद्‌गार कथा का निष्कर्ष प्रकट करते हैं।

निर्मला की समस्या मूल में दहेज की समस्या है। 'निर्मला' की ट्रेजेडी का दृश्य स्तम्भित कर देने वाला है। निर्मला के चरित्र द्वारा उपन्यासकार ने समाज की एक बहुत बड़ी कमजोरी की ओर गहरा संकेत दिया है। हमरी अनियमित विवाह व्यवस्था से निर्मला को योग्य वर न मिला, क्योंकि उसके यहाँ देने के लिये पर्याप्त दहेज न था। इसी के साथ जो समाज के खिलाफ आरोप रखा गया है वह है, बेमेल विवाह का। उसके दुष्परिणामों को दिखाकर प्रेमचंद समाज की आँखें खोलना चाहते हैं। प्रौढ़ पति और नवभाँवना पत्नी के बीच के सम्बंध कितने नाजूक होते हैं, कितने अविचारगत, कितने शंकाभरे फिर भी कितने यथार्थ। एक सम्पन्न परिवार के विनाश की जिम्मेदारी इस बेमेल विवाह पर सौंपकर उपन्यासकार समाज को चुनौती देता है।

इस तरह प्रेमचंद ने 'निर्मला' की दुखभरी कहानी लिखकर दहेज की घातक प्रथा का भण्डाफोड़ किया है निर्मला का मरते समय कहना कि मेरी लड़की की शादी किसी उचित व्यक्ति से की जानी चाहिए। लेखक का मत है कि यह कोई व्यक्तिगत समस्या नहीं है। यह तो एक सामाजिक रोग है, जिसका स्थायी उपचार होना चाहिए।

'निर्मला' नें प्रेमचंद ने विवाह के प्रश्न को ही एकमात्र प्रमुखता दी हैं। प्रेमचंद ने दहेज की प्रथा के विरोध में जहाँ भी अवसर मिला है, कडे शब्दों में अपने विचार प्रकट किये हैं।

'दहेज' और अनमल-विवाह के अभिशापों से मुक्ति किस प्रकार हो, यह प्रश्न पाठकों के ऊपर ही छोड़ दिया गया है। इस प्रकार समस्या के समाधान का आरोपण न होने के कारण 'निर्मला' एक यथार्थवादी उपन्यास की कोटि में सम्मिलित किया आता है।[15]

2.4.10. गबन :

'गबन' में प्रेमचंद ने निम्न-मध्य वर्ग की अभावग्रस्त आर्थिक स्थिति में नारियों की आभूषण-प्रियता, पति का डींग-डांग, झूठा वैभव-प्रदर्शन और उसके दु ष्परिणामों की कथा को अभिव्यंजित करके उसके समाजव्यापी प्रभाव को प्रकट किया गया है।

आभूषणों की शौकीन जलपा की शादी रमानाथ से हो जाती हैं। दयानाथ दिखाने के लिए रमानाथ के विवाह में तीन हजार गहना कर्ज पर बनवाने हैं परन्तु कर्ज न चुका पाने पर पिता-पुत्र सांठ-गांठ करके जलपा के गहने चुरा कर सर्राफ की बेच कर कर्ज मुक्त होते हैं। गहने के पोरी के आघात से जलपा महीनों खाट पकड़ लेती है। रमानाथ मे जलपा से खूब बढ़ा-चढ़ा कर अपनी हंसियत की बखान की थी।

रमानाथ को म्युनिसपैलिटी में क्लर्क की नॉकरी लग जाती है। जलपा के रुप और जवानी पर मतवाला रमानाथ उधार गहने पर गहने खरीदता जाता है और गहनों पर मतवाली जलपा कंगन और हार पहनती जाती है। गहने पाकर पति को प्यार-सेवा करने लगती है।

जलपा के कँगन देखकर उसकी सहेली रतन भी वैसा ही कंगन बनवाने के लिए रमानाथ को छ: सौ रुपये देती है। वह रुपये सरफि पहले के बाकी रुपये में रख लेता है। रमानाथ रतन का कंगन नहीं बनवा पाता। आफिस के लाये रुपये में से रमा की अनुपस्थिति जलपा रतन को रुपये लौटा देती है। अब रमानाथ आफिस का रुपया कहाँ से जमा केर? और इसी चिंता में घर छोड़कर भाग जाता है। जालपा को जब स्थिति का पता चलता है तब वह अपना चन्दहार बेच कर आफिस के रुपये जमा कर देती है।

उधर रमानाथ स्वटिक देवीदीन और जग्गो की सहायता से कलकत्ता में चाय की दूकान चलाता है और एक दिन पुलिस से भयभीत होकर पकड़े जाने पर म्युनिसपैलिटी से गबन की बात स्वीकार कर लेता है, किन्तु पुलिस को जब पता चलता है कि इसने म्युनिसपैलिटी से गबन नहीं की है तो उसे प्रलोभन देकर एक डकैती केश में झूठा गवाह बना देती है।

रतन के पति एडवोकेट इन्दभूषण की मृत्यु हो जाती है और उनका भतीजा मणिभूषण धूर्तता से रतन की सारी सम्पति हड़प लेता है। जलपा को रमानाथ का पता लग जाता है। रमानाथ के चरित्र का आधोपति पतन हो जाता है। वह जोहरा वेश्या के प्रेमपाश में बँध जाता है, पुलिस के हाथ खिलौना बन जाता है किन्तु जलपा के फटकारने पर रमानाथ अपना बयान बदल देता है। मुकदयें के सभी व्यक्ति छूट जाते हैं। देवीदीन, जोहरा, जलपा, रतन, रमानाथ,

जग्गी, सुखी ग्राम जीवन व्यतीत करते हैं और संवा कार्य-करते हुए आदर्श गाँव का निर्माण करते हैं। देवीदीन खेती करते हैं। रमानाथ वैधक का कार्य करता है।

शोक और बीमारी के कारण रतन की मृत्यु हो जाती है। जोहरा किसी को बचाने के प्रयास में बाढ़ में डूब जाती हैं।

इस उपन्यास में नारियों की आभूषण-प्रियता को प्रकट किया जाता है। जलपा गहनों पर जान देती है रतन कंगन के पीछे मतवाली दिखती है। बुढ़िया जग्गो अब भी गहने पहरनती है। 'गबन' में रतन एवं वकील साहब के अनमोल विवाह का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। साथ ही पुलिस का अत्याचार और धाँधली, धर्म के नाय पर ढोंग रचाने वाले सेठ करोडीमल जैसे लोगों पर व्यंग्य किया गया है जो दृटर से मजदूरों को पिटवाता है, घी में चर्बी मिलाता है, किन्तु कम्बल का दान करके दानी होने का ढोंग करता है। अन्त में अभावग्रष्त जीवन में मिथ्या-प्रदर्शन से उत्पन्न समस्याओं की ओर दृष्टिपात किया गया है।[16]

2.4.11. कर्मभूमि :

इस उपन्यास में सामाजिक एवं कौटुम्बिक समस्याओं के साथ-साथ किसी न किसी प्रकार के सामयिक आन्दोलन एवं मज़दूरों का वर्णन है। 'कर्मभूमि' उपन्यास भी 'प्रेमाश्रम' की भाँति दलित किसानों एवं मजदूरों की भूकवाणी का स्वर है। इसमें शिक्षा संस्थाओं की, अर्थ व्यवसायी नीति। म्यूनिसिपल कर्मचारियों की स्वार्थपरता, सेठ साहूकारों के धनार्जन के घृणित उपाय, जमीदारों की विलासिता एवं क्रूरता, मठाधीश, महंत एवं स्वेच्छाचार आदि की कलात्मक दृष्टि से सुंदर व्याख्या की गयी है।

इस उपन्यास में सुखदा, मुन्नी, रेणुकादेवी, नैना, सकीना तथा पठानिन आदि महिलाओं ने पुरुषों की अपेक्षा अधिक सफलता के साथ सत्याग्रंह-संग्राम का संचालन करके-देश की जागृति और सजीवता का आदर्श परिचय दिया है।[17]

2.4.12. गोदान :

यह आधुनिक भारतीय जीवन का दर्पण है। यह उपन्यास समान्य और मध्यवर्ग की समस्याओं को लेकर चला है। 'गोदान' की कहानी भी एक किसान की जीवनी को लेकर चली है, जिसके चारों और मध्यवर्ग का जीवन भी घूमता है। सामान्य किसानों के सब गुण-अवगुण उसमें विद्यमान हैं। किस प्रकार अपनी परिस्थितियों और सांकारो से पिसता हुआ, वह दरिद्र प्राणी करुण मृत्यु प्राप्त करता है, किस प्रकार सभी का पेट भरता हुआ वह स्वयं अपने

जीवन की किसी सामान्य इच्छा को पूर्ण करने में असमर्थ रहता है, यही सब कुछ दिखाना 'गोदान' का लक्ष्य है।

यह प्रेमचंद का अन्तिम उपन्यास है, जो सर्वश्रेष्ठ रचना है। जमीदार, महाजन, पटवारी, पुजारी, पुरोहित, पुलिसवाले आदि किस प्रकार किसान के पसीने की कमाई को हड़प कर जाते हैं, इसका सजीव चित्रण होरी की जीवन-गाथा में हुआ है। उसके जीवन की एक छोटी-सी आकाक्षा है-अपने जीवन की एक छोटी-सी आकाक्षा है-अपने द्वार पर गौ बाँधना, इस आकाक्षा की पूर्ति के लिये वह छल और बल दोनों का प्रयोग करता है किन्तु वह उसे कभी पूरी नहीं कर पाता।

'गोदान' में शोषित वर्ग के जीवन की समस्याओं का चित्रण धार्मिक रुप में दिया गया है, किन्तु पूर्ववर्ती उपन्यासों की भाँति इसमें लेखक ने कोई समाधान प्रष्तुत करने का प्रयत्न नहीं किया है। 'गोदान' में कृषक जीवन की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि दशाओं का युग दशाओं के अनुरुप चित्रण हुआ है।

'गोदान' एक ओर गाँव और दूसरी ओर शहरी महाजनों के प्रभाव की चित्रित करने वाला उपन्यास है। अतः 'गोदान' शोषित वर्ग के जीवन की समस्याओं का उपन्यास है।

'गोदान' एक भारतीय किसान की जीवनगाथा है, जिसमें उसकी सभी विशेषताओं और उसके सभी यह विद्यमान है। उसका आज का जीवन भूख, बीमारी, जड़ता और वेदना से पूर्ण है, और उसका भविष्य वर्तमान से कहीं अधिक अंधकारमय और भयंकर है। उपन्यास का प्रमुख पात्र होरी उपन्यासकार की अमर सृष्टि है। यह पहला अवसर है, जबकि हिंदी कथा साहित्य में किसान का चित्रण एक व्यक्ति के रुप में किया गया है। इस प्रकार 'गोदान' किसान के जीवन का काल्पनिक प्रतिनिधित्व करता है और अत्याचारी सरकार के साथ उसने जो मोर्चा लिया है, उसका जीता-जागता स्वरुप प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार 'गोदान' में कृषक समाज का संघर्ष महाजनों से दिखाया गया है। 'गोदान' में जमीदार तो एक ही है, पर महाजन तीन-तीन हैं। ये तीनों महाजन कृषक समाज को जोंक की भाँति चूसे ले रहे हैं। हीरो के रुप में किसान का यही क्रम है कि वह महाजन से उधार लेकर जमीदार को लगान देता है और अपनी कमाई वह लॉक व्याज पर से महाजन को दे देता है।

अतः 'गोदान' भारतीय संस्कृति, और लोक परम्परा को साथ लेकर चलने वाले भारतीय कृषक वर्ग के संघर्षरत जीवन की तपस्या का यथार्थ चित्र और संस्कृति विरोधी शोषक वर्गों की महाजनो सभ्यता के काले कारनामों का इतिहास है। 'गोदान' उपन्यास की शैली में भारतीय जीवन का महाकाव्य है। [18]

2.4.13. मंगलसूत्र :

यह प्रेमचंद का अंतिम अपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास के लेखन काल के मध्य में ही प्रेमचंद अस्वस्थ हो गये थे और उपन्यास के पूरा होने से पहले ही उनका देहांत हो गया।

'मंगलसूत्र' के मुद्रित अवस्था में केवल 35 पृष्ठ उपलब्द हैं, जिन्हें अमृत-राय ने 'प्रेमचंद-स्मृति' पुस्तक में प्रकाशित किया है। संभवतः 'गोदान' के प्रकाशित होने के पश्चात् प्रेमचंद ने 'मंगलसूत्र' लिखना प्रारंभ कर दिया था और अपने जीवन के अंतिम काल तक वे उसे बराबर लिखते रहे थे। [19]

2.5. निष्कर्ष :

निष्कर्षतः प्रेमचंद के साहित्यिक कृतित्व में उपन्यासों का विशेष महत्व है। उनकी
औपन्यासिक कृतियाँ जहा एक ओर कलात्मक विकास का निदर्शन करती हैं, वही दूसरी ओर
नारी जागरण की भूमिका भी निर्मित करती हैं। प्रेमचंद ने यथार्थवाद के स्वरुप पर भी विचार
किया है। उनके अनुसार 'यथार्थवाद का यह आशाय नहीं है कि हम अपनी दृष्टि की अंधकार
की ओर केन्द्रित करें। अन्धकार में मनुष्य को अंधकार के सिवा और सूझ ही क्या सकता है ?
..... साहित्य का संवंध सत्य और सुंदर से है, यह हमें न भूलना चाहिये। प्रेमचंद ने 'तिरिया
निश्चय ही नहीं लिखा होता।
चरित्तर' जैसी कहानी या 'कटघरे' जैसा उपन्यास 'उपन्यास-रचना' नामक निबंध भी लिखा।
प्रेमचंद ने उपन्यासों की सृजन प्रक्रिया पर
उपन्यास का भवन खड़ा करने के लिये उन्होंने यह मुख्य साधन बतलाये -
(1) अवलोकन (2) अनुभव (3) स्वाध्याय (4) अंतदृष्टि (5) जिज्ञासा (6)
विचार-आंकलन। वे किस्सा गो थे और पैदाइशी किस्सा गो थे (नि.वि. शर्मा)। उनके लिये
सबसे अधिक महत्व प्लाट का था। उन्होंने लिखा वास्तव में प्लाट सोच लेने के बाद फिर
लिखना आसान हो जाता है। लेकिन प्लाट सोचने के साथ ही चरित्रों की कल्पना भी करनी
पड़ती है, जिनके द्वारा यह प्लाट प्रदर्शित किया जाये। उन्होंने प्लाट के तीन गुणों को रेखांकित
किया है- सरलता, मौलिकता और से रोचकता। अतः हिंदी उपन्यास परंपरा में मुंशी प्रेमचंद
एक चिर अमर व्यक्तित्व हैं।

सन्दर्भ :

1. ''......अर्द्ध -शिक्षितों की सम्पति होने के कारण उपन्यास साहित्य में घृणा की दृष्टि से देख जाते थे। पिता अपने पुत्रों को, भाई अपने छोटे भाई और बहनों को उपन्यास पढ़ने से रोकते थे..... साहित्यिक लेखक उपन्यास लिखना निन्दा की वस्तु समझते थे।''
- डॉ० श्री कृष्ण लाल-आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास, पृ-289
2. डॉ० एस. एन. गणेशन - हिंदी उपन्यास साहित्य का अध्ययन, पृ- 67
3. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय- प्रेमचंद के औपन्यासिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-16.
4. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-20-21
5. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-50
6. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-50-52
7. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-52
8. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-52
9. प्रेमचंद सेवासदन, पृ-23
10. प्रेमचंद सेवासदन, पृ-28
11. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-53-54
12. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के कथा साहित्य में नारी समस्यायें, पृ-23
13. वही पृ-24
14. वही पृ-32
15. वही पृ-27-28
16. डॉ० त्रिलोकीनाथ पाण्डेय - प्रेमचंद के औपन्याषिक चरित्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ-60-61
17. डॉ० सॉ. मेहर दत्ता पाथरीकर - प्रेमचंद के कथा साहित्य में नारी समस्याएं पृ-25
18. वही पृ-34-35
19. वही पृ-35-36